पुलिस सुधार की कवायद

विकास नारायण राय

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी देश की पुलिस-व्यवस्था के साथ भी नारेबाजी वाला सलूक कर रहे हैं। कुछ वैसे ही जैसे महंगाई, रोजगार, सबका विकास, सांप्रदायिक-सद्भाव, उत्पादकता, काला धन, सीमा प्रबंधन, स्त्री सशक्तीकरण के नाम पर राजनीतिक नारेबाजी को उनके शासन में नीतिगत स्थापनाओं की तरह पेश किया जा रहा है। आंतरिक सुरक्षा और कानून-व्यवस्था की तमाम गंभीर चुनौतियों को आतंकवाद, अतिवाद और अलगाववाद के सांचे में हिंदू राष्ट्रवादी चश्मे से देखने की भाजपाई जिद का शिकार रहे मोदी ने, देश के शीर्ष पुलिस सम्मलेन में इनका निराकरण भी आदतन एक मसीहाई नारे में समेट दिया है- 'स्मार्ट पुलिसिंग'।

'**स्म**ार्ट', मोदी का पुलिस मार्गदर्शन के लिए गढ़ा पर्याय है। जिन पुलिस वालों की रिहायशी बैरकें, कामकाजी थाने और गश्ती पलटनें उन्नीसवीं शताब्दी की याद दिलाएं, जिनके हाथों में सौंपे कानून औपनिवेशिक अंदाज के हों, जिनकी कार्यप्रणाली भ्रष्टाचार और सत्ताचार पर टिकी हो, उन्हें इस लोकतांत्रिक देश का प्रधानमंत्री महज वाकपटुता की 'स्मार्ट' पॉलिश से चमकाना चाहता है। उसकी कवायद में न मनमानी पुलिस के नागरिक-संवेदी होने की अनिवार्यता शामिल है और न सामंती कानूनों को लोकतांत्रिक रुझान देने की प्राथमिकता।

28 से 30 नवंबर को गुवाहाटी में राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों के पुलिस मुखिया और केंद्रीय सशस्त्र पुलिस बलों के प्रमुखों के उनचासवें वार्षिक सम्मलेन में मोदी की 'स्मार्ट' पुलिस छाई रही। बकौल मोदी- एस से स्ट्रिक्ट और सेंसिटिव, एम से मॉडर्न और मोबाइल, ए से एलर्ट और एकाउंटेबल, आर से रिलायबल और रिस्पांसिबल, टी से टेक्नो-सेवी और ट्रेंड। इस शासकीय घुट्टी में तीन अन्य रस्मी आयामों को मिलाया गया- दक्ष गुप्तचर नेटवर्क, बेहतर पारिवारिक कल्याण और शहीदों की प्रेरक स्मृति। बिना किसी रूपरेखा के पेश किया गया 'स्मार्ट' पुलिसिंग का यह खाका, दक्षता और सक्षमता के प्रचलित तत्त्वों की प्रशासनिक शब्दावली का घालमेल है। खालिस नौकरशाही स्वाद की इस मोदी-खिचड़ी से जनता की 'कानून के शासन' की भूख तो क्या तृप्त होगी, खुद पुलिस का असाध्य औपनिवेशिक अपच भी पूर्ववत कायम रहेगा।

निर्णय क्षमता के धनी मोदी से असहमत लोग भी मानेंगे कि मनमोहन सिंह के स्पंदनहीन शासन के बाद उनकी धड़कती शैली ने सरकारी अमले में ऊर्जा का एकबारगी संचार तो किया है। ज्वलंत पुलिस मुद्दों को लेकर भी उनसे पुलिस सम्मलेन में किसी न किसी करतब की प्रतीक्षा अवश्य रही होगी।

हालांकि, मुनाफा बाजार को सामाजिक विकास की पूर्व शर्त बनाने में लगे शासक वर्ग के सरोकारों में लोकोन्मुख पुलिस की अवधारणा का सतही समावेश ही संभव रहा है। मनमोहन सिंह ने भी यूपीए दौर में पुलिस प्रणाली में बदलाव के नाम पर आधा दर्जन पुलिस मिशन बना डाले थे, जिनकी समीक्षा की वार्षिक रस्म अदायगी भी सम्मेलन-दर-सम्मेलन की जाती रही। इस बार मोदी के सलाहकारों ने उन मोटी फाइलों से धूल उतारना भी जरूरी नहीं समझा।

जाहिर है, लोकतांत्रिक आकांक्षाओं पर खरी, एक 'अच्छी' पुलिस की दिशा में सार्थक राजनीतिक पहल के लिए भारतवासियों को लंबी प्रतीक्षा करनी होगी। हां, पुलिस नौकरशाही अपने आकाओं को संतुष्टि प्रदान करने वाली 'स्मार्ट' भाषा को बखूबी समझती है। स्मार्ट यानी पेशेवर कौशल में दक्ष ऐसी पुलिस, जो कानून के शासन की छवि के अनुरूप आंकड़ा-प्रबंधन में माहिर हो। तभी देश में घटिया से घटिया शासन-तंत्र के पास भी अच्छी से अच्छी कानून-व्यवस्था की दावेदारी के आंकड़े होते ही हैं। जबकि एक लोकतंत्र-संवेदी सक्षम पुलिस, जो किसी लोकशाही में स्वाभाविक होनी चाहिए, जन-मारीचका बनी रहती है। हालांकि, भूलना नहीं चाहिए कि बतौर मुख्यमंत्री भी पुलिसिंग, मोदी की दुखती रग रही। उनके बारह वर्ष के शासन में, गुजरात में सांप्रदायिक दंगे, फर्जी मुठभेड़ें और निगरानी स्कैंडल खुद मोदी के लिए भी व्यक्तिगत रूप से बवाले-जान बने रहे। पारंपरिक रूप से बेहतर कानून-व्यवस्था वाले इस प्रदेश की पुलिस सत्ताधारियों के सांप्रदायिक राग पर नाचने वाली, टूटे मनोबल की एक नेतृत्वविहीन संस्था बना दी गई। एक बहुलतावादी समाज में राजनीतिक ध्रुवीकरण के विभाजक प्रयोग को पुलिस के दैनिक काम-काज में उतार कर हिंदुत्ववादी लंपटता को बेखौफ कर दिया गया। मोदी के अंतरंग गृहमंत्री अमित शाह की निरंकुशता तले बरसों तक राज्य में नियमित डायरेक्टर जनरल पुलिस नहीं लगाया जा सका, जबकि बंजारा जैसे अपराधी अफसर-गिरोहों की मनमानी खुले राजनीतिक संरक्षण में चलती रही। अनुभव बताते हैं कि अल-कायदा जैसे आतंकवादी संगठनों को हिंदुस्तानी कॉडर उपलब्ध कराने में यह आबो-हवा खूब रास आई। फिलहाल, प्रधानमंत्री के रूप में मोदी की पुलिस शुरुआत भी उत्साहवर्धक संकेत नहीं देती।

सामान्यतया राष्ट्रीय राजधानी में आयोजित होने वाले विचार-विमर्श के शीर्ष पुलिस संस्करण का इस बार अशांत पूर्वोत्तर में बिरला आयोजन जरूरी नहीं था कि बस रस्म अदायगी का मंच बन कर

खासकर, क्योंकि पूर्ण बहुमत के साथ प्रधानमंत्री बनने के बाद मोदी का शीर्ष पुलिस नेतृत्व को यह पहला संबोधन था। लेकिन विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र का प्रधानमंत्री पुलिस-छवि को बजाय लोकतांत्रिक आईने में देखने के, फिल्मी आईने में देखने पर आमादा नजर आया। पुलिस की नकारात्मक छवि के लिए बॉलीवुड पर अंगुली उठाते हुए उसका तलिस्मान रहा- फिल्मों में पुलिस की सकारात्मकता भी दिखाई जानी चाहिए!

रह जाए। कानून-व्यवस्था और आंतरिक सुरक्षा के उद्वेलित परिदृश्य में जन-अनुरूप अवधारणाओं को रेखांकित किया जाना केंद्र में नई सरकार के 'सबका साथ सबका विकास' बेंचमार्क के भी अनुरूप होता।

खासकर, क्योंकि पूर्ण बहुमत के साथ प्रधानमंत्री बनने के बाद मोदी का शीर्ष पुलिस नेतृत्व को यह पहला संबोधन था। लेकिन विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र का प्रधानमंत्री पुलिस-छवि को बजाय लोकतांत्रिक आईने में देखने के, फिल्मी आईने में देखने पर आमादा नजर आया। पुलिस की नकारात्मक छवि के लिए बॉलीवुड पर अंगुली उठाते हुए उसका तलिस्मान रहा- फिल्मों में पुलिस की सकारात्मकता भी दिखाई जानी चाहिए!

आश्चर्य नहीं कि ऐसी सतही नारेबाजी में अरसे से मुंह बाए खड़े पुलिस-व्यवस्था के तमाम जरूरी सवाल दरकिनार रहे। पुलिस सुधार, संवेदी-लोकतांत्रिक पुलिस, स्त्री सुरक्षा, लापता बच्चे, किशोर अपराध, सांप्रदायिक और जातीय तनाव, नस्ली हिंसा, जटिल कानून, खर्चीले कायदे, बेइंतहा न्यायिक देरी, सरकारी तंत्र में भ्रष्टाचार, धन-शोधन, साइबर जालसाजी, सड़क और रेल दुर्घटनाएं, खूनी माओवादी स्टेलमेट, घोर विवादास्पद 'अफस्पा' प्रावधान, आर्थिक और सामाजिक विस्थापन, सामुदायिक घेटो, राष्ट्रीय संसाधनों और सार्वजनिक धन की कारपोरेट लूट, कर चोरी, पुलिस-मीडिया तनाव, पुलिस भर्ती और प्रशिक्षण सुधार, पुलिस आधुनिकीकरण बजट, सीबीआइ और अन्य जांच एजेंसियों का राजनीतिक दुरुपयोग जैसे दौर के ज्वलंत कानून-व्यवस्था से जुड़े मसलों को साधने के लिए प्रधानमंत्री के तरकश में तीर थे ही नहीं।

पूर्वोत्तर में हुए इस सम्मलेन में वहां के सर्वाधिक बिगड़ैल राज्य मणिपुर की इरोम शर्मिला के डेढ़ दशक पुराने गांधीवादी अनशन 'अफस्पा हटाओ' पर सरकारी चुप्पी तोड़ने का दूरगामी महत्त्व होता। सम्मलेन के तुरंत बाद, तीस नवंबर को सेवानिवृत्त हुए केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल (सीआरपीएफ) के महानिदेशक दिलीप त्रिवेदी ने भी 'अफस्पा' को सुरक्षा बलों के लिए अनावश्यक बताया। जब माओवाद प्रभावित इलाकों में तमाम केंद्रीय सशस्त्र पुलिस बल बिना अफस्पा प्रावधानों के काम कर सकते हैं, तो कश्मीर और पूर्वोत्तर में आंतरिक सुरक्षा पर तैनात सेना की यूनिटों को भी तदनुरूप प्रशिक्षण देने में संकोच क्यों? खुद सेना के माछिल जैसे ताजातरीन कोर्ट मार्शल के फैसले और बडगाम जैसी फर्जी मुठभेड़ों से हुई किरकिरी का सबक है कि बेलगाम होने पर सुरक्षा बलों को जन-अविश्वास की भारी कीमत अपनी वैधानिक विश्वसनीयता खोकर चुकानी पड़ती है। मिजोरम में तो साठ के दशक के सेना अभियान के घाव आज की पीढ़ी के दिलो-दिमाग पर अमिट हैं। मोदी के 'स्मार्ट' पुलिस नारे में दो ही, बेशक दिखावे के, जन-तत्त्व हैं- 'सेंसिटिव' और 'एकाउंटेबल'; दोनों यहीं धराशाई हो जाते हैं।

गुवाहाटी सम्मलेन में गृहमंत्री राजनाथ सिंह के वक्तव्य में भी आंतरिक सुरक्षा को लेकर माओवादी मसला प्रमुख रहा, और इस मोर्चे पर वर्षों से चल रहे खूनी संघर्ष पर किसी राजनीतिक रणनीति को लेकर शून्यता भी। माओवाद, बेशक सरकार-विरोधी और व्यवस्था-विरोधी है, पर राष्ट्र-विरोधी नहीं। माओवादियों की हिंसक गतिविधियां कितनी ही अवांछनीय क्यों न हों, पर उनकी व्यापक राजनीति को जन-विरोधी नहीं कहा जा सकता। पूर्वोत्तर और कश्मीर में, जहां अलगाववाद से निपटने की आड़ में बजट-अनुदान की बंदरबांट का धंधा सरकारी मिलीभगत से उत्तरोत्तर फलता-फूलता रहा है, राजनीतिक वार्तालाप और आर्थिक पैकजों की अनिवार्यता से परहेज नहीं। फिर माओवादी इलाके में सैन्य कार्रवाई के समांतर अन्य पहल पर चुप्पी क्यों?

यह छिपा नहीं है कि देश का एक वृहद खनिज/ वन संपदा का क्षेत्रफल और आर्थिक-सामाजिक रूप से कटी खासी बड़ी आबादी, माओवादी प्रभाव की चपेट में है। कॉरपोरेट दबाव में शुरू किए गए दीर्घकालीन बेहद खर्चीले पुलिस अभियान को बिना किसी राजनीतिक दिशा और सामाजिक परिप्रेक्ष्य के अंधी लड़ाई बना कर चलाते रहने से राष्ट्र को कुछ भी हासिल नहीं होगा। बेहद संगत होता कि गुवाहाटी सम्मलेन में 'पुलिस सुधार' को लेकर प्रकाश सिंह मामले में सर्वोच्च न्यायालय के फैसले के क्रियान्वयन की प्रक्रिया में, राजनीतिक और प्रशासनिक गतिरोध के चलते, प्रधानमंत्री की ओर से स्पष्ट दिशा-निर्देश सामने आए होते। हालांकि ये एक-आयामी सुधार भी आम नागरिक के नजरिए से नाकाफी कवायद ही हैं, पर सरकारी चुप्पी तो पूरी तरह यथास्थिति के पक्ष में है। क्या शासकों को इतना भी नजर नहीं आता कि कानून-व्यवस्था लागू करने में रोजमर्रा के तनावों के निराकरण की दिशा में, खासकर सामुदायिक भागीदारी, कमजोर तबकों और अल्पसंख्यकों के सरोकारों और मीडिया की भूमिका को समाहित करने को लेकर, तुरंत एक संस्थागत पहल होनी चाहिए।

परस्पर नत्थी कानून-व्यवस्था और न्याय-व्यवस्था में किसी नागरिक-संवेदी बदलाव के बुनियादी संकेत नदारद हैं। आज दोनों इस स्थिति में नहीं हैं कि नए वर्ष में समाज को आपराधिक हिंसा के माहौल से सुरक्षा की भावना की ओर ले जाने का दिखावा भी कर सकें। जन-आंदोलनों और मीडिया दबावों के चलते, खासकर स्त्रियों और बच्चों की सुरक्षा से संबंधित कानूनों में जो बदलाव किए भी गए हैं, वे बजाय पीड़ित का सशक्तीकरण करने के, राज्य की दंडकारी शक्तियों में वृद्धि करने तक सीमित रहे हैं। जबकि पुलिसकर्मियों, अभियोजकों, जजों और जेल कर्मियों के लोकतांत्रीकीकरण की दिशा में वांछित प्रशिक्षण की कवायदें रस्म अदायगी बनी हुई हैं।

पुलिस बल की संख्या बढ़ने या उन्हें ज्यादा गश्तीवाहन और आधुनिक हथियार देने से, जिस पर गुवाहाटी सम्मलेन में जोर रहा, राज्य की सामरिक उपस्थिति बेशक यहां-वहां बेहतर दिखने लगे, समाज में आपराधिक हिंसा के माहौल की वस्तुस्थिति में फर्क नहीं पड़ेगा। स्त्री विरुद्ध हिंसा का बहु-प्रचारित परिदृश्य इसका जीता-जागता नमूना है। मोदी के 'स्मार्ट' नारे से आंतरिक सुरक्षा की अलगाववादी, आतंकवादी और अतिवादी चुनौतियों का परिदृश्य भी बदलने नहीं जा रहा। माओवाद प्रभावित इलाकों में राजनीतिक पहल और सामाजिक परिप्रेक्ष्य से शून्य, केवल सैन्यवादी हल थोपने का आह्वान एक आत्मघाती भूल थी, है और रहेगी। यहां तक कि आतंकवाद की अंतरराष्ट्रीय दस्तक बढ़ने के बावजूद, मोदी शासन में देश में कौमी एकजुटता नहीं, राष्ट्र को कमजोर करने वाले विभाजक सांप्रदायिक मुद्दे तूल पकड़ रहे हैं। गुवाहाटी पुलिस सम्मलेन को मोदी का संदेश उनके कहे में नहीं, अनकहे में निहित है। भ्रष्टाचार-सत्ताचार के दलदल में फंसी पुलिस और खर्चीली-अंतहीन भूल-भुलैया बनी न्यायिक मशीनरी को लोकोन्मुख पद्धति में ढालने की राजनीतिक इच्छाशक्ति फिलहाल नदारद है, रहेगी।

गतांक की चीरफ़ाड़

मज़दूर मोर्चा के 1-15 जनवरी 2015 के अंक में समसामयिक मुद्दों पर अनेक महत्वपूर्ण लेख पढने को मिले। 'मंथर गति से चल रहा वर्षों पुराना फरीदाबाद 6 लेन प्रोजेक्ट-कैग ने बताया अनिल अम्बानी को जाल साज, धोखेबाज,' '100 करोड़ मैट्रो रेल से हड़पना चाहता था अम्बानी' व 'दोहरा टोल टैक्स: निर्वाचन क्षेत्र को खट्टर का तोहफ़ा' लेखों से स्पष्ट है कि ज़ालसाज़ी, धोखाधड़ी व लूट करने वाले पूंजीशाहों को कानून व अदालत की कोई परवाह नहीं है फ़िर चाहे वह सरकार कांग्रेस की हो अथवा भाजपा की। बिना सड़क बनाए टोल टैक्स के नाम से वसूली करना घोर अपराध, धोखाधड़ी व लूट है। टोल के नाम से पैसा वसूल करके उसी से सड़क बनाना बिल्कुल नाज़ायज है। इस मामले में अम्बानी, जी समूह के मालिक सुभाष चंद्रा आदि सब एक जैसे हैं।

अम्बानी के मामले में तो कैग ने अपनी रिपोर्ट में अम्बानी की आपराधिक गतिविधियों की पुष्टि भी कर दी है। अम्बानी ने विभिन्न राजमार्गों पर टोल बैरियर लगाकर टोल के नाम से जनता से करोड़ों रुपए वसूल किए और उसमें से करोड़ों रुपए मुनाफ़ा कमाने के लिए म्युचुअल फंड में निवेश कर दिए। गौरतलब है कि यूपीए शासनकाल में कैग रिपोर्ट आने से पहले ही विपक्ष को पता लग जाता था और फ़िर विपक्ष संसद की कार्यवाही को ठप्प कर देता था। तथा मीडिया व विपक्ष दोनों इसको मुख्य मुद्दा बना देते थे। आश्चर्य है कि पुर्व विपक्ष वर्तमान शासक दल भाजपा तथा मीडिया दोनों ही इस मामले में मौन है। मोदी का मौन तो समझ में आता है क्योंकि उसके अनुसार पूंजीशाहों को खुली छूट होनी चाहिये जिससे कि वे देश में पूंजी निवेश कर सके। इसका उदाहरण है वाईब्रेंट गुजरात समिट में पहले ही दिन अंबानी, बिड़ला, अदानी, ग्रुप आदि ने गुजरात में लाखों करोड़ रुपये निवेश करने की घोषणा की। फिर मोदी सरकार पूंजीशाहों की आपराधिक गतिविधियों का संज्ञान कैसे लेगी?

'**मोदी** का अस्सी घाट गुणगान मानो राम का लंका अभियान' तथा 'सफ़ाई तो सफ़ाईकर्मी ही कर सकते हैं फ़ोटो सेशन नहीं' लेखों द्वारा स्पष्ट है कि सफाई कार्य को सफ़ाईकर्मियों द्वारा ही किया जा सकता है यदि सरकार व स्थानीय स्वायत संस्थाएं इस कार्य के लिए गंभीर हों। सफ़ाई कार्य के लिए उचित इन्फ्रा स्ट्रक्चर विकसित करने की तरफ ध्यान देने की वजाए झाड़ू पकड़ कर फ़ोंटो खिंचवाए जा रहे हैं तथा मीडिया इसका प्रचार व गुणगान करने में लगा रहता है। मीडिया में मोदी सरकार की कोई आलोचना न हो जाए इसलिए मोदी ने मीडिया कर्मियों को अपने निवास पर चाय के लिए आमंत्रित किया जहां मीडिया कर्मी मोदी के साथ सेल्फी खिंचवाने में मस्त हो गए और मोदी के इस कदम से मोदी का गुण -गान करने में लग गए।

लेख 'क्या जनता परिवार एकजुट हो भगवा चुनौती का सामना कर पाएगा' मैं जनता परिवार के विभिन्न घटकों द्वारा इस संबंध में किए जा रहे प्रयास का सटीक विश्लेषण किया गया है। ये सभी घटक अतीत में भाजपा के सहयोगी रहे हैं इसलिए उनके द्वारा भाजपा/भगवां चुनौती का सामना कर पाना संदिग्ध लगता है।

लेख 'भूमि अधिग्रहण कानून में फेरबदल क्यों' से स्पष्ट है कि यह फेरबदल मोदी सरकार द्वारा उद्योगपतियों के हितों की रक्षा के लिए किए जा रहे हैं जो नि:संदेह किसानों के हितों के विपरीत होंगे। गौरतलब है कि जब यूपीए सरकार ने भूमिअधिग्रहण कानून बनाया था तब विपक्षी भाजपा ने इसका पूरा समर्थन किया था।

लेख 'लोक से दूर होता लोकतंत्र में वर्तमान लोकतंत्र का सटीक विश्लेषण किया गया है।' लेख 'गुड़गांव कमिश्नर प्रदीप कासनी का अचानक तबादला :हुड्डा को नहीं भाया, खट्टर को ईमानदारी ने सताया' से स्पष्ट है कि कासनी जैसे ईमानदार अधिकारी हुड्डा, खट्टर आदि किसी मुख्यमंत्री को नहीं चाहिए क्योंकि सरकार चाहे किसी की हो सभी भूमाफ़ियों व पूंजीशाहों को संरक्षण देते हैं जहां से उनको मालमत्ता मिलता है।

लेख 'मोदी और गणतंत्र दिवस' द्वारा लेखक ने मोदी व ओबामा के बीच बढ़ती नज़दीकियों का सही विश्लेषण किया है। भाजपा तो शुरू से ही अमेरिका की पक्षधर रही है और मोदी ओबामा व अमेरिका को हर तरह से खुश करने में लगे हैं। गणतंत्र दिवस पर अमेरिकी राष्ट्रपति के साथ उनकी अपनी सुपर सेफ गाड़ी कैडिलेक भारत आएगी जिसमें बैठकर ओबामा 26 जनवरी की परेड में जाएंगे। जबकि अभी तक यह परंपरा रही है कि 26 जनवरी पर भारत आने को विदेशी मुख्य अतिथी सुबह राष्ट्रपति भवन जाते हैं और वहां से वह भारतीय राष्ट्रपति की गाड़ी में सवार होकर भारतीय राष्ट्रपति के साथ राजपथ पर आते हैं। परंतु इस बार दोनों राष्ट्रपति अपनी-अपनी गाड़ियों में अलग-अलग जाएंगे क्योंकि अमेरिकी सीक्रेट सर्विस के अधिकारियों ने भारतीय परम्परा की दलील ठुकरा दी है। इस घटना से स्पष्ट है कि भारत व अमेरिका के बीच बराबरी के संबंध नहीं है और गणतंत्र दिवस की परम्परा को तोड़ना भारत का अपमान है जिसकी मोदी को कोई परवाह नहीं है।

लेख 'धर्मांतरण और कानून' तथा 'जिहाद की जरूरत' देश में चल रहे धर्मांतरण व घर वापसी अभियान द्वारा उत्पन्न धार्मिक व साम्प्रदायिक तनाव के मद्देनज़र अति महत्वपूर्ण हैं। गणेश शंकर विद्यार्थी का लेख तो इस मामले में सटीक, समसामयिक व अति महत्वपूर्ण है। वास्तव में धार्मिक कट्टरता के विरुद्ध जिहाद करने की अत्यन्त आवश्यकता है। अन्य प्रकाशित लेख भी प्रशंसनीय व प्रेरणादायक हैं।

-प्रो. जुगल किशोर गुप्ता